जीएम फसलें : सफलताएं और चुनौतियां

—डॉ. वीरेन्द्र कुमार

भारतीय परिवेश में जीएम फसलों को उत्पादकता बढ़ाने वाली तकनीकों के रूप में जाना जा रहा है। सरकार द्वारा बीटी कपास की खेती की मंजूरी देने से देश में कपास का उत्पादन बढ़ा है।अगर हमें विश्व-स्तर पर प्रतिस्पर्धा करनी है, तो जो भ्रान्तियां/संदेह इन फसलों के बारे में फैली हुई हैं तो उनके बारे में किसानों को बताना होगा। वर्तमान कृषि व्यवस्था में कृषि उत्पादन को अधिकतम करने, कृषि से होने वाली आय को बढाने तथा जैविक और अजैविक दबावों के समाधान की आवश्यकता है ,ताकि युवाओं का उत्साह कृषि में बना रहे।

भविष्य में जलवायु परिवर्तन,जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण,खाद्य पदार्थों की बढ़ती मांग जैसी प्रमुख चुनौतियां अधिक प्रबल होंगी। साथ ही तेजी से बदलती जलवायु का फसलों,भूमि,जल, स्वास्थ्य एवं विश्व पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। आने वाले 50 वर्षों में विश्व के तापमान में 2 से 3 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हो सकती है। इस बढ़े हुए तापमान का कृषि प्रणालियों पर अत्यन्त प्रतिकूल प्रभाव होगा।वैश्विक तापमान पर नजर रखने वाली अमेरिका की दो प्रमुख एजेंसियों के अनुसार 1880 से अब तक वर्ष 2015 धरती का सर्वाधिक गर्म साल रहा। अमेरिका के नेशनल ओशन एटमॉस्फेरिक एडमिनिस्ट्रेशन (एनओएए) ने अपनी एक रिपोर्ट में कहा है कि साल 2015 में भूमि व समुद्री सतह का औसत वैश्विक तापमान 20वीं सदी के औसत से 0.90 डिग्री सेल्सियस अधिक रहा। जो गत वर्ष 2014 के मुकाबले 0.16 डिग्री सेल्सियस ज्यादा गर्म था। वैश्विक तापमान में लगातार देखी जा रही इस वृद्धि के लिए ग्लोबल वार्मिंग को जिम्मेदार माना जा रहा है। ग्लोबल वार्मिंग से न केवल मौसम के संतुलन में उतार–चढ़ाव आ रहा है बल्कि हमारे सामाजिक–आर्थिक जीवन पर भी गहरा असर पड़ रहा है। हाल ही में वैश्विक जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग जैसी समस्याओं से लड़ने के लिए फ्रांस की राजधानी पेरिस में एक सम्मेलन का आयोजन किया गया। जिसमें लगभग 176 देशों ने भाग लिया। इन समस्याओं से निपटने में जीएम फसलों की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। एक अनुमान के अनुसार सन 2030 तक भारत की बढ़ती आबादी के लिए गेहूं उत्पादन को 10 मिलियन टन तक बढ़ाना होगा। जैविक एवं अजैविक कारकों के कारण सम्पूर्ण भारत में गेहूं की उत्पादकता दर कम हो रही है। वर्तमान में जैनेटिक इंजीनियरिंग उपरोक्त समस्याओं को समझने एवं उन्नत तकनीकी विकास हेतु एक प्रबल विकल्प है। वैज्ञानिक,समाज

और किसान निरन्तर जैनेटिक इंजीनियरिंग की उपयोगिता को समझ रहे है। उदाहरणस्वरूप जैनेटिक इंजीनियरिंग का उपयोग जैनेटिक गुणों में परिवर्तन कर फसलों को पानी,उर्वरक,खरपतवार व कीटनाशी जैसे अवसादों का प्रतिरोधक बनाने में किया जा रहा है। जैनेटिक इन्जीनियरिंग के उपयोग से फसलों को भौतिक तनावों जैसे उच्च तापमान, मृदा क्षारीयता/लवणीयता तथा सूखे के प्रतिरोधी में भी किया जा रहा है। बीटी कपास किसानों के लाभ के लिए जैनेटिक इंजीनियरिंग के उपयोग का एक अनुकरणीय उदाहरण है। आजकल विभिन्न फसलों में बैसिलस थुरेंजिनेसस नामक जीवाणु के जीन को प्रवेश कराकर ऐसे पौधे तैयार किए जा रहे हैं जिससे जीवाणु की उपस्थिति के कारण कीटों के विरुद्ध कीटनाशक गुण आ जाते हैं। वर्तमान में कीटनाशी नियंत्रण हेतु बैसिलस थुरेंजिनेसस नामक जीवाणु का प्रयोग बहुतायत से किया जा रहा है। इस लेख में जीएम फसलों के द्वारा खेती में उत्पादन लागत कम करने, पानी व अन्य संसाधनों की बचत और संसाधन उपयोग दक्षता बढ़ाने के परिणामस्वरूप किसानों की सामाजिक–आर्थिक दशाओं पर चर्चा की गई है।

वैज्ञानिकों ने आनुवांशिक अभियांत्रिकी तकनीक द्वारा धान की ऐसी प्रजाति विकसित की है जिससे कुपोषण जैसी विश्वव्यापी समस्या दूर हो या फिर धान की कोई कम पानी में उगाने वाली प्रजाति हो। इसी प्रकार यदि आपके बगीचे में गुलाब का पौधा लगा है और आप उसे महीने में एक बार पानी दें इसके बावजूद भी पौधा हरा–भरा और लगातार बढ़ता रहे तो यह एक अद्भुत एवं चमत्कार से कम नहीं होगा कि बिना किसी खास मेहनत के आप बगीचे का आनंद उठा रहे हैं। इस कल्पना को साकार करने में जीएम फसलों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। प्रकति में यह बहुत धीरे–धीरे होता है, और कई लाखों वर्षों में ये बदलाव देखने को मिलते हैं। सबसे पहली पारजीनी फसलों का निर्माण सन् 1962 में अमेरिका में तम्बाकू की फसल में किया गया था जोकि विषाणु रोग प्रतिरोधक था। इसके बाद सन् 1994 में अमेरिका में ही टमाटर की एक ऐसी प्रजाति विकसित की गई जिसके फल पकने के बहुत दिनों के बाद भी खराब नहीं होते थे। यह पहली प्रचलित फसल थी जिसे जीएम तकनीक द्वारा विकसित किया गया था। सन् 1996 में पहली बार पारजीनी फसलें किसानों के खेतों में उगायी गई। आज पूरे विश्व में 181।7 मिलियन हेक्टेयर में पारजीनी फसलों की खेती की जाती है। इस पूरे क्षेत्रफल का 90 प्रतिशत भाग केवल पांच देशों से पूरा हो जाता है। अमेरिका विश्व में क्षेत्रफल की दृष्टि से पहले स्थान पर है। इसके बाद ब्राजील, अर्जेन्टीना एवं भारत क्रमशः दूसरे, तीसरे और चौथे स्थान पर हैं। सन् 2002 में हमारे देश में कुल 13 मिलियन कपास की गांठों का उत्पादन होता था जो सन् 2014 में बढ़कर लगभग 40 मिलियन हो गया। जहां जीएम फसलों की खेती से एकतरफा उत्पादन बढ़ेगा, वहीं दूसरी तरफ देश में भुखमरी व कुपोषण जैसी समस्याओं को कम करने में मदद मिलेगी।

जीएम फसलों से तात्पर्य

जीएम एक संक्षिप्त शब्द है, जिसका तात्पर्य जैनेटिकली मॉडिफाइड फसल से है। आनुवांशिक रूप से परिष्कृत जीव (जीएमओ) उन्हें कहते हैं, जिनके आनुवांशिक पदार्थ को आनुवांशिक अभियांत्रिकी तकनीक के द्वारा बदल दिया गया है। आज जैनेटिक इंजीनियरिंग द्वारा किसी भी जीन या पौधों के जीन को दूसरे पौधों में डालकर एक नई प्रजाति विकसित कर सकते हैं। यानी कि अलग–अलग जातियों में भी संकरण किया जा सकता है। वर्तमान समय में आनुवांशिक इंजीनियरी की सहायता से जीनों को एक जाति से दूसरी प्रजाति में आसानी से डाला जा सकता है। इस प्रकार प्राप्त फसलों को आनुवांशिकी परिवर्तित या पारजीनी (जीएम) फसल कहा जाता है। इन फसलों में उनके स्वयं के न्यूक्लिक अम्ल के अतिरिक्त अन्य जीवों के न्यूक्लिक अम्ल को जोड़ा जाता है। ऐसी ही अनेक फसलें हैं जैसेकि बीटी बैंगन, बीटी कपास व बीटी सरसों आदि। जीएम फसलों को कुछ वैज्ञानिक भुखमरी व कुपोषण जैसी सामाजिक समस्याओं के हल के रूप में देखते हैं। जबकि कुछ वैज्ञानिक और कई सगंठन जीएम फसलों को सेहत,पर्यावरण और खाद्य सुरक्षा के लिए खतरा मानते हैं। वैज्ञानिको के साथ ही कई लोगो का मानना है कि भारत की बढ़ती आबादी और घटते संसाधनों को देखते हुए उसे 2050 तक आज से करीब 50 प्रतिशत ज्यादा खाद्यान्नों की आवश्यकता होगी। इन जरूरतों को पूरा करने के लिए जीएम फसलों को बढ़ावा देना होगा।

जीनांतरण के कुछ प्रमुख तरीके

- उत्तक संवर्धन द्वारा (टिश्यू कल्चर तकनीक)
- सूक्ष्मजीवों की मदद से
- उत्परिवर्तन के द्वारा
- जीन गन के द्वारा

इन सब तरीकों में सबसे ज्यादा प्रयोग सूक्ष्मजीवों की मदद से जीएम फसलों के निर्माण में किया गया। आज यह तकनीक अन्य प्रचलित तकनीकों की अपेक्षा अत्यधिक प्रभावी है। जिन फसलों में सूक्ष्मजीवाणु पद्धति कारगर नहीं होती है, उनके लिए भौतिक प्रणालियां उत्तम पायी गई हैं। परन्तु भौतिक विधियां काफी महंगी होती हैं। जीएम फसलों की श्रेणी में आर्थिक रूप से उन्नत,शाकनाशी प्रतिरोधी और उच्च तापमान रोधी फसलें शामिल हैं। सूखारोधी व सरसों की माहूरोधी जैसी कुछ फसलें निकट भविष्य में अस्तित्व मे आने के लिए तैयार हैं।

जीएम फसलें क्यों जरूरी हैं?

विभिन्न जैविक व अजैविक तनावों जैसे सूखा, अधिक तापमान, कीटों, बीमारियों, मृदा लवणीयता, अत्यधिक कम तापमान व जलाक्रान्ति के कारण फसलों की उपज में भारी कमी आ जाती है। जैसे भारत में गेहूं की उत्पादकता के लिए उच्च तापमान एक प्रमुख बाधा है। औसत तापमान में प्रत्येक डिग्री सेल्सियस तापमान के बढ़ने पर गेहूं की उपज में 3 से 4 प्रतिशत की कमी आ जाती है। यहां पर एक ऐसे जीनोटाईप को विकसित करने की जरूरत है जोकि उच्च तापमान को सहन कर सके। जीएम फसलों के कई लाभ भी हैं–जैसे आनुवांशिक इंजीनियरिंग के द्वारा फसलों की पौष्टिकता भी बढ़ायी जा सकती है। इस तरह कुपोषण जैसी विश्वव्यापी समस्या से भी छुटकारा मिल सकता है। इसी तरह मक्का की कीटरोधी किस्में तैयार की गई हैं। अनुसंधानों द्वारा सोयाबीन की ऐसी किस्में विकसित की गई, जो खरपतवारनाशियों को सहन कर लेती हैं। इसी प्रकार वैज्ञानिक आनुवांशिक अभियांत्रिकी तकनीक द्वारा धान की ऐसी प्रजातियां विकसित करने में लगे हैं, जिन्हें कम पानी में उगाया जा सकता है। इस प्रकार बदलते जलवायु परिवेश में हमारे प्राकृतिक संसाधनों मुख्यतः जल की बचत होगी। इसके अलावा बढ़ती आबादी, सीमित संसाधन व भविष्य के लिए आवश्यक कृषि उत्पादन जैसी समस्याओं का सामना करने के लिए वर्तमान समय में जीएम फसलों का उपयोग अत्यन्त आवश्यक है। तीस हजार विभिन्न उत्पाद आज अमेरिका के बाजार में उपलब्ध हैं। इनका मकसद कुछ नए कीटरोधी, खरपतवारनाशी, अधिक पोषण क्षमता और अधिक टिकाऊ पौधे व खाद्य उत्पाद हासिल करना है। इस प्रक्रिया में चयनित कुछ जीन की पहचान कुछ इच्छित गुणों व विशेषताओं के लिए की जाती है और एक प्रकार के पौधे से दूसरे में प्रत्यारोपित की जाती हैं। इसका उपयोग खाद्य उत्पाद की परम्परागत प्रजातियों के मुकाबले अधिक पोषण तत्व वाले खाद्य उत्पाद उपलब्ध कराने के लिए किया जा रहा है। यद्यपि भारत में यह खाद्य उत्पाद अभी इतने प्रचलित नहीं हैं। परन्तु निकट भविष्य में इनके सम्भावित उपयोग को नकारा नही जा सकता हैं।

बीटी कपास

वास्तव में बी.टी. शब्द मिट्टी में पाए जाने वाले जीवाणु बैसिलस थुरेंजिनेसस से लिया गया है। इस जीवाणु में पाए जाने वाला जीन (बी.टी. जीन) एक तरह का विषैला पदार्थ पैदा करता है। वैज्ञानिकों ने विषैला पदार्थ पैदा करने वाले जीन को इस जीवाणु में से निकालकर आनुवांशिक अभियांत्रिक तकनीक द्वारा कपास की फसल में डालकर कीट प्रतिरोधी किस्मों का विकास किया। जब कीट मुख्यतः वॉल वार्म कपास के पौधों के आर्थिक महत्व के भागों को खाता है तो विषैले पदार्थ को खाकर मर जाता है। इस कारण वैज्ञानिकों ने बैसिलस थुरेंजिनेसिस के उस जीन को कपास के पौधे में डालकर बीटी कपास तैयार की है। इससे कपास की फसल में लगने वाले इस कीट को मारने के लिए कीटनाशकों के छिड़काव की जरूरत नहीं पड़ती है। यह कीट पत्ती खाने के बाद स्वतः ही मर जाता है। भारत में बीटी कपास की व्यावसायिक खेती वर्ष 2002 में शुरू की गई। जबकि यह सबसे पहले अमेरिका में 1996 में उगाई गई। आज भारत में बीटी कपास के अंर्तगत कुल कपास क्षेत्र का 90 प्रतिशत है। बी.टी. कपास शुरू में अच्छी उपज देती है। कीटनाशकों का भी कम प्रयोग होता है। भारत में कपास की फसल में गुलाबी सूंडी (पिंक बाल वार्म) अधिक हानि पहुंचाती है। यह सूंडी गूलर में छेद करके अंदर प्रवेश कर जाती है। जिससे गूलर में कपास न बनकर वह सड़कर नीचे गिर जाते हैं। परन्तु आजकल बीटी कॉटन के इस्तेमाल से इस समस्या से निजात पाया जा सकता है। आजकल भारत में बी.टी. कपास का क्षेत्रफल दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। किसानों द्वारा बी.टी. कपास उगाने से उनको कीटनाशक दवाईयों का कम छिड़काव करना पड़ता है जिससे उनको आर्थिक लाभ भी अधिक होता है। भारत में उगाए जाने वाली रेशेदार फसलों में कपास एक महत्वपूर्ण नकदी एवं औद्योगिक फसल है। इसलिए इसे सफेद सोना भी कहा जाता है। भारत में कपास की खेती पंजाब से लेकर केरल तक की जाती है। कपास की देश व विदेश में बढ़ती मांग के चलते भारत कपास निर्यातक देशों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। बीटी कॉटन की बढ़ती खेती के कारण भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा कपास निर्यातक देश भी बन गया है। आज कपास की खेती करने वाले पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, मध्य प्रदेश, कर्नाटक व तमिलनाडु के 90 प्रतिशत क्षेत्र में बीटी कॉटन का प्रयोग किया जा रहा है।

गोल्डन राइस

आज विश्व आबादी का एक बड़ा हिस्सा भूखमरी के साथ–साथ सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे जिंक, आयरन, विटामिन ए और आयोडीन की कमी से भी ग्रसित हो रहा है। बच्चों के लिए काम करने वाली संयुक्त राष्ट्र संघ की यूनिसेफ इकाई के लिए कुपोषण टॉप एजेंडा में है। प्रतिष्ठित कृषि वैज्ञानिकों के सुझाव पर फसलों की नई किस्में जो सूक्ष्म पोषक तत्वों से भरपूर होंगी जिसमें लौहयुक्त बाजरा, प्रोटीनयुक्त मक्का व जिंकयुक्त गेहूं का विकास किया जाएगा। केंद्रीय बजट 2015–16 में कृषि अनुसंधान से उत्पादकता बढ़ाने और सूक्ष्म पोषक तत्वों से भरपूर फसलों की नई प्रजातियां की खेती पर जोर दिया गया है। पारम्परिक पौध प्रजनन एवं आधुनिक जैव–प्रौद्योगिकी के द्वारा पोषक तत्वों जैसे आयरन व जिंक से भरपूर फसल उत्पादों का विकास करना जैव–समृद्धि

करण कहलाता है। वैज्ञानिकों ने सन् 2000 में अमेरिका में जीन परिवर्तन करके गोल्डन राइस का विकास किया था। इन चावल के दानों में प्रो विटामिन ए की मात्रा अन्य चावलों से तीन गुना ज्यादा होती है। इसके प्रयोग से एशियाई देशों में प्रो विटामिन ए की समस्या से हजारों बच्चों को कुपोषण से बचाया जा सकता है जिससे विटामिन 'ए' की कमी के कारण होने वाली अंधेपन की बीमारी आदि से मुक्ति मिल सकेगी। यह पौधा बीटा कैरोटीन युक्त पीले रंग का चावल पैदा करता है। बीटा कैरोटीन ऐसा तत्व है जो शरीर में विटामिन 'ए' में परिवर्तित हो जाता है। भारत की आधी से अधिक आबादी के लिए धान न केवल जीवन का पोषक है,बल्कि पौष्टिकता का मुख्य आधार भी है। धान एशिया महाद्वीप की प्रमुख और अग्रणी खाद्यान्न फसल है। बासमती धान अपनी उच्च गुणवत्ता के कारण सम्पूर्ण विश्व में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आज बासमती धान किसानों की आय के लिए एक मुख्य फसल बन चुकी है। बासमती चावल भारत की समृद्धि का प्रतीक है, जिसका व्यापार सुदूर देशों तक फैला है। बासमती धान अपने उत्कृष्ट पौष्टिक गुणों के कारण अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में बहुत लोकप्रिय है। भारत अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में बासमती धान का मुख्य उत्पादक और अग्रणी निर्यातक है। साथ ही बासमती धान विदेशी मुद्रा अर्जित करने का भी मुख्य कृषि उत्पाद है। स्थानीय बाजारों में भी सुगंधित धान की मांग सामान्य धान की अपेक्षा अधिक ही रहती है।

फलों, फूलों और सब्जियों की शेल्फ लाईफ बढ़ाने में

हमारे देश में खाद्य प्रसंस्करण के तकनीकी ज्ञान और दक्षता की कमी है। भारत दुनिया में फलों–सब्जियों का सबसे बड़ा उत्पादक है। लेकिन हम मात्र दो प्रतिशत प्रसंस्करण कर पाते हैं। दुनिया के प्रसंस्करण खाद्य बाजार में हमारी हिस्सेदारी मात्र 1 से 1.5 प्रतिशत है। कारण यह है कि हमारे देश में फल–सब्जियों का औद्योगिकीकरण आज तक नहीं हुआ है। हमारे देश में हर वर्ष 50 हजार करोड़ रुपये की फल–सब्जियां नष्ट हो जाती हैं। क्योंकि उपयुक्त भंडारण सुविधाओं के अभाव में हम उन्हें सुरक्षित नहीं रख पाते हैं। इससे छोटे व सीमांत किसान अधिक प्रभावित होते हैं। वैश्वीकरण के इस दौर में केवल परम्परागत फसलों को उगाकर ही हम समद्ध नहीं हो सकते बल्कि बदलती मांग व कीमतों के अनुरूप फसल प्रतिरूप में परिवर्तन बहुत आवश्यक है। जिससे कि उत्पादक और उपभोक्ता दोनो ही इसका भरपूर लाभ उठाने के लिए प्रेरित हो और देश विकास पथ पर अग्रसर हो। हाल ही में भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र ने एक तकनीक विकसित की है जोकि लीची की भंडारण क्षमता और उपयोग होने तक की अवधि यानी शेल्फ लाइफ को एक महीने तक बढ़ा सकती है। जैसाकि हम जानते हैं कि लीची का फल बहुत जल्दी खराब हो जाता है। फलों की तुड़ाई के साथ ही उसका फल भूरे रंग का होने लगता है। रेडियेशन तकनीक द्वारा लीची का भंडारण और उपयोग अवधि को बढ़ाने के साथ–साथ उसका गुलाबी रंग भी महीनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। साथ ही साथ भडारंण अवधि के दौरान फलों की गुणवत्ता व पौष्टिकता पर भी सूक्ष्म जीवाणुओं का कोई प्रतिकूल असर नहीं होगा। इससे बाजार में फलों की ज्यादा आपूर्ति हो सकेगी। शल्फ लाइफ बढ़ने के साथ ही अंतर्राष्ट्रीय बाजार में लीची की मांग कई गुना बढ़ जाएगी। इस तकनीक का सीधा असर लीची उत्पादक किसानों की आय पर भी पड़ेगा। इस तकनीक को छोटे स्तर से लेकर औद्योगिक पैमाने तक उपयोग कर सकते हैं। कुछ ही दिनों के प्रशिक्षण द्वारा यह तकनीक उपयोग में लायी जा सकती है। खाद्य एवं पोषण सुरक्षा के सभी पहलुओं को घ्यान में रखकर यह तकनीक विकसित की गई है।

जीएम फसलों पर भ्रम/संदेह की स्थिति

जीएम फसलों के प्रति किसानों की त्वरित प्रतिक्रिया होती है। कुछ किसान इन्हें तुरन्त अपना लेते हैं जबकि कुछ इन्हें अपनी खेती का हिस्सा बनाने मे भ्रम की स्थिति में रहते हैं। किसानों को जीएम फसलों को अपनाने के लिए इनके गुणों और अवगुणों से परिचित कराना चाहिए। जीएम फसलें उपज बढ़ाने के उद्देश्य से बनायी जाती हैं। इन फसलों की उपज परम्परागत फसलों की अपेक्षा अधिक होती है। शाकनाशी सोयाबीन व कीटनाशी कपास इनके उदाहरण हैं। जीएम फसलों की खेती से निश्चित रूप से उत्पादकता में वृद्धि होगी। परन्तु इनके दूरगामी परिणामों को भी ध्यान में रखना होगा। किसानों को डर है कि जीएम फसलों के विकास में प्रयासरत बहुर्राष्ट्रीय कम्पनियां परम्परागत फसलों के विशिष्ट जींस को अपनी फसलों में इस्तेमाल कर नई प्रजातियों का विकास कर इनका पेटेंट करा सकती हैं। इसी कारण किसानों ने परम्परागत फसलों को बचाने और उनका पेटेंट हासिल करने की पहल की है। साथ ही देश में जीएम फसलों को बढ़ावा देकर कुछ बहुर्राष्ट्रीय कम्पनियां पैसा कमाना चाहती हैं। इसके अलावा जीएम फसलों से पर्यावरण को नुकसान हो सकता है। वास्तव में मृदा में लाखों की संख्या में लाभदायक जीवाणु, फफूंद व अन्य सूक्ष्मजीव मौजूद होते हैं। जीएम फसलों के जहर का जड़ों के माध्यम से मिट्टी को प्रदूषित कर देने का भी संदेह है। जिसके परिणामस्वरूप मिट्टी में उपस्थित अनेक लाभदायक सूक्ष्म जीवों की क्रियाशीलता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की सम्भावना रहती है। ऐसी परिस्थति में मृदा में सूक्ष्म जीवों द्वारा होने वाली अपघटन–विघटन की क्रियाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है जिसमें पौधों की वृद्धि व विकास के लिए पोषक तत्वों की उपलब्धता कम हो जाती है। इसी प्रकार जैविक खादों

के अपघटन में भी कुछ जीवाणु व फफूंद महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जीएम फसलों का एक बड़ा खतरा पर–परागण से है। यदि कुछ खरपतवारों में इन फसलों के जीन परागण आदि के द्वारा चले गए तो वे सुपरवीड यानी महाखरपतवार बन सकते हैं जिन पर शाकनाशियों का असर ही नहीं होगा। साथ ही उनके प्राकृतिक शत्रु (भक्षी) भी उन्हें कोई नुकसान नहीं पहुंचा पाएंगे। इस प्रकार पूरी खाद्य सुरक्षा ही खतरे में पड़ जाएगी। इसी तरह जिन फसलों को आनुवांशिक अपरिवर्तित करके कीट अवरोधी बनाया जाता है, उनसे लाभदायक कीटों की प्रजातियों के समाप्त होने का खतरा भी उत्पन्न हो सकता है। बीटी कपास के प्रति छोटे–छोटे सूंडी में प्रतिरोधक क्षमता विकसित होती जा रही है। जिसके कारण गत वर्ष पंजाब व हरियाणा के कई क्षेत्रों मे कपास की फसल को सफेद मक्खी नामक कीट द्वारा काफी नुकसान हुआ था।

चुनौतियां

जीएम फसलों के बीज आनुवांशिक इंजीनियरिंग की तकनीक से तैयार किए जाते हैं। इनसे तकनीक के अन्तर्गत बीजों के स्वजातीय जीनों के आदान–प्रदान की प्रक्रिया को नष्ट कर उनमें दूसरी प्रजाति के जीनों को समाहित किया जाता है। जैसे बैंगन में किसी ऐसे जंगली पौधे के जीन डाल दिए जाते हैं जोकि किसी विशेष गुणों जैसे कीटरोधी, रोगरोधी या अधिक तापमान व लवणीयता को सहन करने वाले हो सकते हैं। इस प्रक्रिया से तैयार हुए बीज प्रकृति के खिलाफ हैं और कई समस्याएं उनके साथ जुड़ जाती हैं। विभिन्न अनुसंधानों में पाया गया है कि बीटी कपास जैसी फसलें कीटों के आक्रमण से तो बच जाती हैं परन्तु उनकी गुणवत्ता प्राकृतिक फसलों जैसी नहीं होती। बीटी कॉटन पर बाल वार्म का कोई असर नहीं पड़ता है। लेकिन बीटी कॉटन पत्तियों का रस चूसने वाले कीटों का मुकाबला नहीं कर पाता है। इन बीजों का एक बड़ा नुकसान यह भी है कि ये गैर जीएम फसलों को संक्रमित कर देते हैं। भारतीय परिवेश में जीएम फसलों को उत्पादकता बढ़ाने वाली तकनीकों के रूप में जाना जा रहा है। सरकार द्वारा बीटी कपास की खेती की मंजूरी देने से देश में कपास का उत्पादन बढ़ा है। इसके अलावा यह भी देखने में आया है कि विदेशी बीज कम्पनियां उत्पादकता बढ़ाने के नाम पर दूसरे देशों में पैर पसार रही हैं। अमेरिकी कम्पनी मोन्सेंटो जिसने भारत में बीटी कपास की खेती को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है अनेक अंतर्राष्ट्रीय बड़ी बीज कम्पनियां 'थर्ड जेनरेशन' बीजों को बढ़ावा देने में लगी हैं। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि इन 'थर्ड जेनरेशन' बीजों का प्रयोग केवल एक ही बार किया जा सकता है। ऐसी अवस्था में किसानों को हर साल नया बीज खरीदना होता है। देश में बीटी कपास के अधिकांश बीज विदेशी व निजी कम्पनियों से ही खरीदे जा रहे हैं जिसका सीधा लाभ इन कम्पनियों को हो रहा है न कि अपने देश के किसानों को होता है। हमारे देश में कपास के अलावा अन्य किसी जीएम फसल की खेती करने के लिए सरकार ने मंजूरी नहीं दी है। प्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन ने भी जीएम फसलों के प्रयोग से पहले उनके परीक्षण पर जोर देने की बात कही है। वास्तव में जीएम फसलों के फील्ड ट्रॉयल से पता चलेगा कि ये फसलें सेहत और पर्यावरण के लिए सुरक्षित है या नहीं। इस सम्बन्ध में यूरोपीय संघ और संयुक्त राज्य अमेरिका ने संयुक्त रूप से जैव सुरक्षा मूल्यांकन हेतु बड़े पैमाने पर दिशा–निर्देश तय किए हैं जोकि जीएम फसलों के व्यावसायीकरण से पहले सुरक्षा मूल्यांकन प्रकिया के तहत अपनाए जाते हैं। इन दिशा–निर्देशों के तहत जीएम फसलों को पांच विभिन्न चरणों से गुजरना पड़ता है। प्रत्येक चरण जैसे कि प्रयोगशाला, हरितगृह, लधु क्षेत्र परीक्षण, खुले खेत में परीक्षण और अंत में बड़े क्षेत्र में परीक्षण हेतु प्राधिकरण समीक्षा में जीएम फसलों का जैव मूल्यांकन किया जाता है। जीएम फसलों के प्रयोगशाला से खेत तक उत्पादन हेतु उपलब्ध होने के लिए कम से कम 8–10 वर्ष लग जाते हैं। आज दुनिया के कई देश जीएम फसलों का उत्पादन कर रहे हैं। वहां इनके कोई दष्परिणाम सामने नहीं आए हैं। इन तकनीकों का प्रयोग कर बेहतर उत्पादन और कृषि को अधिक लाभदायक बनाया जा सकता है।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि जीएम फसलों की खेती करने से पहले इसके सेहत व पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों का गहन अध्ययन करने की जरूरत है। जीएम फसलों के बीजों को किसानों को जारी करने से पहले कई वर्षों तक उनका खेत में परीक्षण किया जाना चाहिए। अगर हम मानव समाज के कल्याण और देश की तरक्की को ध्यान में रखकर जीएम फसलों पर परीक्षण करेंगे तो परिणाम अच्छे ही आएंगे। इस तरह विश्व खाद्य एवं पोषण सुरक्षा के समाधान के लिए जीएम फसलों को बढ़ावा देना जरूरी है। क्योंकि जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों के साथ ही फसलों को कीटों, सूखे व उच्च तापमान से बचाने में जीएम फसलों की महत्त्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। साथ ही हम सामाजिक विरोध को भी नजरअंदाज नही कर सकते हैं। ऐसे मे जीएम फसलों के अपार लाभों के लिए सार्वजनिक व निजी संस्थानों/संगठनों/क्षेत्रों को विभिन्न मंचों पर जागरुकता के लिए साथ–साथ पहल करने की जरूरत है। तभी हम भूख मुक्त विश्व निर्माण की परिकल्पना कर सकेंगे।

(लेखक जल प्रौद्योगिकी केन्द्र, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में कार्यरत हैं और विज्ञान की विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में नियमित रूप से लिखते रहते हैं।)
ई–मेलः v.kumarnovod@yahoo.com